सिंहावलोकन

(तृतीय भाग)

यशपाल

यशपाल

(1903 – 1976)

यशपाल का जन्म फ़िरोजपुर छावनी, पंजाब में हुआ। प्रारंभिक शिक्षा गुरुकुल कांगड़ी, डी.ए.वी. स्कूल, लाहौर और फिर मनोहर लाल हाई स्कूल में हुई। वहीं से सन् 1921 मे प्रथम श्रेणी में मैट्रिक की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। प्रारंभिक जीवन रोमांचक कथाओं के नायकों सा है। भगत सिंह, सुखदेव, बोहरा और आज़ाद के साथ मिलकर क्रांतिकारी कार्यों मे खुलकर भाग लिया। सन् 1931 में 'हिंदुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र सेना' के सेनापति आज़ाद के मारे जाने पर सेनापति नियुक्त। 1932 में पुलिस के साथ एक मुठभेड में इलाहाबाद में गिरफ्तार। 1938 में जेल से छूटे।

तब से अंतिम दिन तक लेखन कार्य में संलग्न रहे।

सिंहावलोकन

(तृतीय भाग)

यशपाल

सिंहावलोकन

तृतीय भाग

दल की रक्षा के लिये आज़ाद के प्रयत्न : दिल्ली बम फैक्टरी में दल का विच्छेद। कांग्रेसी नेताओं से संपर्क और उनसे सहायता के लिए प्रयत्न। वायरलेस की दुबारा खोज। कैलाशपति की गिरफ्तारी। आर्थिक संकट और कानपुर में डकैती। वीर शालिग्राम की शहादत। लैमिंगटन रोड गोली काण्ड वीरभद्र की उलझन। रूस यात्रा की योजना। अदालत में इन्द्रपाल का चमत्कार और आत्म-बलिदान। आज़ाद के विचार और व्यक्तित्व। पंडित नेहरू और क्रांतिकारी। आज़ाद की शहादत। 6

भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरू की शहादत : हिसप्रस के शहीदों के प्रति गांधी जी और कांग्रेस का दृष्टिकोण। फांसी की कोठरी और फांसी का तख्ता। शहीदों तथा अन्य निर्भय लोगों के व्यवहार और दृष्टिकोण का तुलनात्मक भेद। फांसी के दंड की सार्वजनिक प्रतिक्रिया। 79

पुनः संगठन का प्रयत्न : कुछ सहायक। कानपुर गोलीकांड। फरारी के जीवन की सतर्कता, अफवाहें और गलत फहमियाँ। नये नायक की नियुक्ति और नया कार्यक्रम पुलिस और यशपाल की अंतिम टक्कर। 89

जेल में : हवालात और पुलिस। अहिंसात्मक आंदोलन या क्रांति के प्रति ब्रिटिश साम्राज्यशाही का दृष्टिकोण। विश्वासघात के लिये प्रलोभन। जेल की दुनियां। गोरा बारक। दंड द्वारा सुधार। विकृत प्रवृत्तियों के निकास। अनशन और मणि बैनर्जी की शहादत। भविष्य की कल्पनाएँ। जेल में विवाह। 1937 का कांग्रेसी शासन। रिहाई के मार्ग में अड़चनें और रिहाई। 118

भूमिका

'सिंहावलोकन' के पहले दो भागों के प्रकाशन के समय के रूप में कुछ लिख चुका हूँ। तीसरे भाग में यह संस्मरण समाप्त हो रहे हैं। समाप्ति के समय भी कुछ कहना संगत जान पड़ रहा है।

पहली बात है इन संस्मरणों के क्षेत्र और रूप के संबंध में। अधिकांश पाठकों की धारणा रही है कि मैं आपबीती या अपनी कहानी लिख रहा हूँ। हि. स. प्र. स. के संबंध में मेरे संस्मरण मेरी या मेरे साथियों की आपबीती जरूर है, परंतु मेरी सयुर्ण आपबीती इन संस्मरणों में नहीं आ सकती; आनी भी नहीं चाहिये। महत्व हि. स. प्र. स. आंदोलन के लिये किये प्रयत्नों का है। उन प्रयत्नों का महत्व इसलिये नहीं कि वह किसी व्यक्ति विशेष के अनुभव हैं। हि. स. प्र. स. से संबंध रखने वाली अनेक ऐसी घटनाओं का उल्लेख इन संस्मरणों में है जो मेरे व्यक्तिगत अनुभव तो नहीं है, परंतु उनका संबंध मुझसे इसलिए है क्योंकि मैं हि. स. प्र. स. के संगठन के अंतर्गत था। जब भी कभी स्वतंत्रता प्राप्ति के प्रयत्नों का इतिहास लिखा जाने का समय आयेगा, यह उल्लेख उपयोगी हो सकेंगे। मेरे अनेक अनुभव ऐसे भी रहे हैं जिनका हि. स. प्र. स. के लक्ष्य और क्षेत्र से संपर्क नहीं था। उनका उल्लेख आंदोलन के इतिहास के प्रसंग में अनुपयुक्त होता, इसलिये मैंने उन्हें इन संस्मरणों में नहीं लिखा है।

घटनाओं के विवरण में दृष्टिकोण का महत्व बहुत अधिक रहता है; बल्कि दृष्टिकोण ही वास्तविक चीज होती है। अंग्रेजी साम्राज्यशाही के समर्थक लेखकों द्वारा लिखे गये भारत के अतति के इतिहास को, तटस्थ इतिहासकारों द्वारा लिखे उस काल के इतिहास को और अपने अतीत गौरव के लिये अंध-अभिमानी भारतीय इतिहास लेखकों द्वारा लिखे इतिहासों की तुलना से यह बात स्पष्ट हो जाती है। संभव है, अहिंसात्मक क्रांति की सफलता का गौरव करने वाले इतिहास लेखक हि. स. प्र. स. के आंदोलन को विपथगामी हिंसा के प्रयत्न ही समझें। उदाहरणत: 1931-32 में यू. पी. के इंस्पेक्टर जनरल पुलिस हालिन्स ने भी अपनी पुस्तक No Ten Commandments में चन्द्रशेखर आज़ाद की शहादत का वर्णन एक दुस्साहसी अपराधी के पुलिस से लड़ाई में जूझ जाने वाले के रूप में ही किया है। फिर भी मैंने प्रयत्न यही किया है कि घटनाओं से अपने महत्व को दूर रखकर उन वृत्तांतों और अनुभवों को तथ्यों के रूप में लिखा जाय ताकि पाठक हमारी न्यूनताओं और विवशताओं

को भी समझ सके।

इन संस्मरणों के पिछले दो भागों से हि. स. प्र. स. से व्यक्तिगत रूप से संबंधित और परिचित अधिकांश लोगों का संतोष हुआ है, इस बात से मैं भी संतुष्ट हूँ। सभी का संतोष ही सकेगा, ऐसी आशा मैंने की थी, न मुझे है। युद्ध ने भी सर्वजनहिताय, सर्वजनसुखाय कहने का साहस नहीं किया था। उन्हें बहुजनहिताय, बहुजनसुखाय कहकर ही संतुष्ट होना पड़ा था, क्योंकि कुछ लोगों का स्वार्थ और तृप्ति न्याय और सत्य के विरोधी भी हो सकते हैं। इस सत्य को मानना ही पड़ेगा और सत्य की रक्षा के लिये उसी के अनुसार आचरण भी करना पड़ेगा। आत्मतुष्टि के लिये घटनाओं और व्यक्तियों को काल्पनिक रूप और रंग देने से जिनका प्रयोजन पूरा होता है, उन्हें मैं संतुष्ट नहीं कर सकता।

जहाँ तक बन पड़ा, घटनाओं का उल्लेख प्रमाण सहित करने का प्रयत्न किया है, परंतु अतीत की बातें लिखते समय- और हो सकता है आज की भी अनेक वास्तविकताओं का वर्णन करते समय-अदालती प्रमाण जुटा सकना संभव न हो। सच्चाई का अपना एक बल होता है। यदि मैंने वास्तविकता के साथ न्याय नहीं किया और कुछ लोगों का दावा है कि वे वास्तविकता को अधिक जानते हैं या अधिक सच्चाई से पेश कर सकते हैं तो उन्हें भी अवसर है कि विचार और परख के लिये ऐतिहासिक तथ्यों को पाठकों के सम्मुख रखें। तथ्यान्वेशी श्रोता या पाठक विवेक से सत्य और असत्य की परख स्वयं भी कर सकते हैं, इसी विश्वास के आधार पर मैं संस्मरणों के इन तीनों भागों को पाठकों को सौंप रहा हूँ।

इन संस्मरणों के विलम्ब से प्रकाशित होने के कारण कुछ बाद के प्रसंग भी इन पुस्तकों में आ गये है। फिर भी इन संस्मरणों के प्रकाशित हो जाने का यदि कोई उपयोग है तो उसका श्रेय उन लोगों का है जो मुझे इन्हें लिख डालने के लिये प्रेरित करते रहे हैं। सबसे अधिक श्रेय है प्रकाशवती को जिनकी दृष्टि में इन संस्मरणों के ठीक से लिखने जाने का बहुत महत्व रहा है। चौथे संस्करण में जहाँ-तहाँ शब्दों में कुछ परिवर्तन किये गये है या कुछ पंक्तियाँ बढ़ाना उचित जान पड़ा, उसका प्रयोजन स्पष्टता रहा या बाद में जागी स्मृति या प्राप्त सूचना रही। पुस्तक के मूल तत्व या भाव में परिवर्तन नहीं आया।

यशपाल, 8 फरवरी, 1953

दल की रक्षा के लिये आज़ाद के प्रयत्न

4 सितम्बर, 1930 के दिन, दोपहर समय भैया आज़ाद ने दिल्ली की बम फैक्टरी में हिंदुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र सेना की केंद्रीय समिति को भंग कर दिया। केंद्रीय समिति को तोड़ देने की मजबूरी का मूल कारण मुझ गोली मारने के निर्णय को बदल दिया जाना था। यह निर्णय बदल देने से दो समस्याएं ऐसी उठ खड़ी हुई थीं जिनके कारण दल को एक बार तोड़ देना अनिवार्य हो गया। एक समस्या यह थी कि पंजाब में धन्वन्तरी और सुखदेवराज मुझे दण्ड न दिया जाने का क्या कारण बताते? यदि वे कहते कि यशपाल पर लगाये गये आरोप गलत थे तो यह बात उनके प्रति साथियों के भरोसे और विश्वास को समाप्त कर देती, क्योंकि आरोप उन्होंने ही लगाये थे। यदि यह कहा जाता किए यशपाल ने अपने अपराधों के लिये क्षमा माँगी हैं तो एतराज हो सकता था कि क्षमा माँगने का अवसर तो सजा निश्चित करने से पहले दिया जाना चाहिये था। तिस पर मैं यह अपमान कैसे सह लेता कि मैंने क्षमा माँग ली है। क्षमा माँगने का अर्थ होता अपराध को स्वीकार करना। इस स्थिति में मुझ पर आरोप लगाकर मुझे गोली मार देने की माँग करने वालों का और मेरा एक साथ काम कर सकना संभव नहीं रहा।

दूसरी जटिल समस्या थी कि केंद्रीय समिति द्वारा मुझे गोली मार दी जाने के निर्णय का भेद खुला कैसे? केवल केंद्रीय समिति का ही कोई सदस्य यह भेद खोल सकता था। जब तक यह पता न लग जाता कि किस सदस्य ने ऐसा किया है, सभी पर संदेह किया जा सकता था। एक संदिग्ध आदमी को अपने बीच रखकर तो केंद्रीय समिति चल नहीं सकती थी।

मैं उस समय किसी भी अवस्था में भेद देने वाले व्यक्ति या व्यक्तियों के नाम बताने के लिये तैयार नहीं था। मैं न केवल नाम बताने के लिये तैयार नहीं था बल्कि परिस्थिति को उलझाकर ठीक अनुमान कर सकने का भी अवसर न बनने देना चाहता था। उस समय मेरे विचार में मेरा और दल का भला चाहने वालों के प्रति मेरा यही कर्तव्य था। फिर भी कुछ बातें तो बहुत साफ थीं। उदाहरणत: मेरे कानपुर से दिल्ली लौटते ही प्रकाशवती को बम फैक्टरी से हटा ले जाना। यह प्रकट था कि सूचना मुझे कानपुर में ही मिल गयी होगी। आज़ाद को धोखे में रखने के लिये मेंने कह दिया था कि मुझे तो इस निर्णय का पता दिल्ली में ही लग चुका था। दिल्ली में यदि कोई भेद दे